Vol XXXVIII No.12
25th March 2015

TITTHAYARA

Postal Reg. No. KOL.RMS / 70/2013-15
R.N.I. 30181/77

ISSN : 2277-7865
Price : ₹ 50

तित्थयर

वर्ष : ३८ अंक : १२ मार्च २०१५

॥ जैन भवन ॥

KUSUM KUSUM KUSUM KUSUM KUSUM KUSUM KUSUM KUSUM KUSUM

KUSUM®

KUSUM QUALITY PRODUCT

श्रीश्री नेमिनाथाय नमः

"ऐसा विश्वास दिल में जमाते चलो
सिद्ध, अरिहन्त को मन में रमाते चलो,
वक्त आयेगा ऐसा कभी न कभी
सिद्धि पायेंगे हम भी कभी न कभी"।

KUSUM CHANACHUR

Founder : Late Sikhar Chand Churoria

MANUFACTURED BY

K. K. FOOD PRODUCTS

A quality product of
Nakeen, Chanachur, Bhujia, Gathia etc.

Partners
Mr. Anil Kumar
Mr. Sunil Kumar Churoria

P.O.- Azimganj, Dist. Murshidabad
Pin- 742122, West Bengal
Mobile: 09734067986/9434060429
Phone No: 03483-253232, Fax No.: 03483-253566
E-mail ID : kusumchanachur@hotmail.com
azimganjsunil@gmail.com

ISSN 2277 - 7865

तित्थयर

श्रमण संस्कृति मूलक मासिक पत्रिका

वर्ष - ३८ अंक - १२ मार्च २०१५

लेख, पुस्तक समीक्षा तथा पत्रिका से सम्बन्धित पत्र व्यवहार के लिये
पता - Editor : Titthayar, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007
Phone : (033) 2268-2655, 2272-9028,
Email : jainbhawan@rediffmail.com
Website : www.jainbhawan.in

विज्ञापन तथा सदस्यता के लिये कृपया सम्पर्क करें --
Secretary, Jain Bhawan, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007
Life Membership : India : Rs. 5000.00. Yearly : 500.00
Foreign : $ 500

Published by Dr. Lata Bothra on behalf of Jain Bhawan from
P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007, Phone : 2268-2655
and printed by her at Arunima Printing Works, 81, Simla Street
Kolkata - 700 006 Phone : 2241-1006

संपादन
डॉ. लता बोथरा
पी-एच.डी., डी.लिट्

॥ जैन भवन ॥

Editorial Board :

1. Dr. Satyaranjan Banerjee
2. Dr. Sagarmal Jain
3. Dr. Lata Bothra
4. Dr. Jitendra B. Shah
5. Dr. Anupam Jash
6. Dr. Abhijit Bhattacharyya
7. Dr. Peter Flugel
8. Dr. Rajiv Dugar
9. Smt. Jasmine Dudhoria
10 Smt. Pushpa Boyd

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	लेख	लेखक	पृ. सं.
१.	यक्ष-यक्षी-प्रतिमाविज्ञान	डॉ. मारुति नंदन प्रसाद तिवारी	४६५
२.	महात्मा गाँधी और अहिंसा की अवधारणा	श्रीमती कल्पना मुकीम	४७५
४.	सोने के कंगन	श्री केवल मुनि	४९१

ISSN 2277 - 7865

कवरपृष्ठ : जैन मुनियों की मूर्तियाँ हाथ में ओघा लिए हुए
बौद्धों में ओघा का प्रचलन नहीं है।
(Fei lai feng caves China)

Composed by:
Jain Bhawan Computer Centre, P-25, Kalakar Street Kolkata - 700 007

यक्ष-यक्षी-प्रतिमाविज्ञान

डॉ. मारुति नंदन प्रसाद तिवारी

(21) भृकुटि यक्ष

शास्त्रीय परम्परा :-

भृकुटि जिन नमिनाथ का यक्ष है। दोनों परम्पराओं में वृषभारुढ़ भृकुटि को चतुर्मुख एवं अष्टभुज कहा गया है।

श्वेताम्बर परम्परा-निर्वाणकलिका में त्रिनेत्र और चतुर्मुख भृकुटि का वाहन वृषभ है। भृकुटि के दाहिने हाथों में मातुलिंग, शक्ति, मुद्गर, अभयमुद्रा एवं बायें में नकुल, परशु, वज्र, अक्षसूत्र का उल्लेख है।[1] अन्य ग्रन्थों में भी इन्हीं लक्षणों के प्रदर्शन का निर्देश है।[2] आचारदिनकर में द्वादशाक्ष यक्ष की भुजा में अक्षमाला के स्थान पर मौक्तिकमाला का उल्लेख है।[3] देवतामूर्तिप्रकरण में चार करों में मातुलिंग, शक्ति, मुद्गर एवं अभयमुद्रा वर्णित हैं; शेष करों के आयुधों का अनुल्लेख है।[4]

दिगम्बर परम्परा-प्रतिष्ठासारसंग्रह में चतुर्भुज भृकुटि का वाहन नन्दी है, किन्तु आयुधों का अनुल्लेख है।[5] प्रतिष्ठासारोद्धार में यक्ष के करों में खेटक, खड्ग, धनुष, बाण, अंकुश, पद्म, चक्र एवं वरदमुद्रा

---

1. भृकुटियक्षं चतुर्मुखं त्रिनेत्रं हेमवर्णं वृषभवाहनं अष्टभुजं मातुलिंगशक्तिमुद्गराभययुक्तदक्षिणपाणिं नकुलपरशुवज्राक्षसूत्रवामपाणिं चेति। निर्वाणकलिका 18.21
2. त्रि.श.पु.च. 7.11.18-19; पद्मानन्दमहाकाव्यः परिशिष्ट-नमिनाथ 18-19; मन्त्राधिराजकल्प 3.45
3. आचारदिनकर 34, पृ. 175
4. भृकुटि (नेमि? र्मनि) नाथस्य पीतस्त्र्यक्षश्चतुर्मुखः।
   वृषवाहो मातुलिंगं शक्तिश्च मुद्गराभयौ।। देवतामूर्तिप्रकरण 7.58
5. नमिनाथजिनेन्द्रस्य यक्षो भृकुटिसंज्ञकः।
   अष्टवाहुश्चतुर्वक्त्रो रक्ताभो नन्दिवाहनः।। प्रतिष्ठासारसंग्रह 5.63

वर्णित हैं।[1] अपराजितपृच्छा में यक्ष के केवल पांच ही करों के आयुध उल्लिखित हैं, जो शूल, शक्ति, वज्र, खेटक एवं डमरू हैं।[2] उल्लेखनीय है कि दिगंबर परम्परा में यक्ष को त्रिनेत्र नहीं बताया गया है।

श्वेताम्बर परम्परा में भृकुटि का त्रिनेत्र होना और उसके साथ वृषभवाहन एवं परशु का प्रदर्शन शिव का प्रभाव प्रतीत होता है। दिगंबर परम्परा में भी भृकुटि का वाहन नन्दी ही है। हिन्दू ग्रन्थों में शिव के भृकुटि स्वरूप ग्रहण करने का भी उल्लेख प्राप्त होता है।[3]

दक्षिण भारतीय परम्परा—दिगंबर ग्रन्थ में वृषभारूढ़ यक्ष को चतुर्मुख एवं अष्टभुज बताया गया है जिसके दक्षिण करों में खड्ग, बर्छी (या शंकु), पुष्प, अभयमुद्रा एवं वाम में फलक, कार्मुक, शर, कटकमुद्रा वर्णित हैं। अज्ञातनाम श्वेतांबर ग्रन्थ में यक्ष चतुर्मुख एवं अष्टमुख है, पर उसका नाम विद्युतप्रभ बताया गया है। उसका वाहन हंस है और उसके करों में असि, फलक, इषु, चाप, चक्र, अंकुश, वरदमुद्रा एवं पुष्प का उल्लेख है। समान लक्षणों का उल्लेख करने वाले यक्ष यक्षी लक्षण में यक्ष का वाहन वृषभ है और एक हाथ में पुष्प के स्थान पर पद्म प्राप्त होता है।[4] दक्षिण भारत के दोनों परम्पराओं के विवरण सामान्यतः उत्तर भारतीय दिगंबर परम्परा के समान हैं।

भृकुटि की एक भी स्वतन्त्र मूर्ति नहीं मिली है। लूणवसही की देवकुलिका 19 की नमिनाथ की मूर्ति (1233 ई.) में यक्ष सर्वानुभूति है।

(21) गान्धारी (या चामुण्डा) यक्षी

शास्त्रीय परम्परा : गान्धारी (या चामुण्डा) जिन नमिनाथ की यक्षी है। श्वेताम्बर परम्परा में चतुर्भुजा गान्धारी (या मालिनी) का वाहन हंस और दिगंबर परम्परा में चामुण्डा (या कुसुममालिनी) का वाहन मकर है।

---

1. खेटासिकोदण्डशरांकुशाब्जचक्रेष्टदानोल्लसिताष्टहस्तम्।
   चतुर्मुखं नन्दिगमुत्फलाकभक्तं जपाभं भृकुटि यजामि।।
   प्रतिष्ठासारोद्धार 3.149। द्रष्टव्य, प्रतिष्ठातिलकम् 7.21, पृष्ठ 337
2. शूलशक्ति वज्रखेटा? डमरूर्भृकुटिस्तथा। अपराजितपृच्छा 221.54
3. रचित भृकुटिबन्धं नन्दिना द्वारि रुद्धे। हरिविलास। द्रष्टव्य, भट्टाचार्य, वी. सी., पू. नि., पृ. 115
4. रामचन्द्रन, टी. एन., पू. नि., पृष्ठ 20

श्वेताम्बर परम्परा–निर्वाणकलिका में हंसवाहना गान्धारी के दाहिने हाथों में वरदमुद्रा, खड्ग एवं बायें में बीजपूरक, कुम्भ (या कुंत?) का उल्लेख है।[1] प्रवचनसारोद्धार, मन्त्राधिराजकल्प एवं आचारदिनकर में कुम्भ के स्थान पर क्रमशः शूल, फलक एवं शकुन्त के उल्लेख हैं।[2] दो ग्रन्थों में वाम करों में फल के प्रदर्शन का निर्देश है।[3] देवतामूर्तिप्रकरण में हंसवाहना यक्षी अष्टभुजा है और अक्षमाला, वज्र, परशु, नकुल, वरदमुद्रा, खड्ग, खेटक एवं मातुलिंग (लुंग) से युक्त है।[4]

दिगम्बर परम्परा–प्रतिष्ठासारोद्धार में मकरवाहना चामुण्डा चतुर्भुजा है और उसके करों में दण्ड (यष्टि), खेटक, अक्षमाला एवं खड्ग के प्रदर्शन का उल्लेख है।[5] अपराजितपृच्छा में चामुण्डा अष्टभुजा और उसका वाहन मर्कट है। उसके हाथों में शूल, खड्ग, मुद्गर, पाश, वज्र, चक्र, डमरू एवं अक्षमाला वर्णित है।[6]

नमि की चामुण्डा एवं गान्धारी यक्षियों के निरूपण में वासुपूज्य की गान्धारी एवं चण्डा यक्षियों के वाहन (मकर) एवं आयुध (शूल) का परस्पर आदान-प्रदान हुआ है। वासुपूज्य की गान्धारी एवं नमि की चामुण्डा मकरवाहना है और नमि की गान्धारी एवं वासुपूज्य की चण्डा की एक भुजा में शूल प्रदर्शित है। चामुण्डा का एक नाम कुसुममालिनी भी है, जिसे हिन्दू कुसुममाली या काम से सम्बन्धित किया जा सकता है। ज्ञातव्य है कि कुसुममाली या काम का वाहन मकर है।[7]

---

1. नमेगान्धारी देवीं श्वेतां हंसवाहनां चतुर्भुजां वरदखड्गयुक्तदक्षिणभुजद्वयां बीजपूरकुम्भ-(कुन्त?)-युतवामपाणिद्वयां चेति। निर्वाणकलिका 18.21
2. प्रवचनसारोद्धार 21, पृ. 94, मन्त्राधिराजकल्प 3.63, आचारदिनकर 34, पृ. 177। शकुन्त पक्षी एवं कुन्त दोनों का सूचक हो सकता है।
3. .....वामाभ्यां बीजपूरिभ्यां बाहुभ्यामुपशोभिता। त्रि.श.पु.च. 7.11.100-101; द्रष्टव्य, पद्मानन्दमहाकाव्यः परिशिष्ट-नमिनाथ 20-21
4. अक्षवज्रपरशुनकुलं मथानस्तु गान्धारी यक्षिणी।
वरखड्गखेट लुंगुं हंसारूढ़ास्तिता कायो।।देवतामूर्तिप्रकरण 7.59.28
5. चामुण्डा यष्टिखेटाक्षसूत्रकड्गोत्कटा हरित्।
मकरस्थार्च्यते पञ्चदशदण्डोन्नतेशभाक्।। प्रतिष्ठासारोद्धार 3.175; द्रष्टव्य, प्रतिष्ठातिलकम 7.21, पृ. 347
6. रक्ताभाष्टभुजा शूलखड्गौ मुद्गरपाशकौ।
वज्रचक्रे डमर्वक्षी चामुण्डा मर्कटासना।। अपराजितपृच्छा 221.35
7. भट्टाचार्य, बी. सी., पू. नि., पृ. 142

दक्षिण भारतीय परम्परा– दिगम्बर ग्रन्थ में चतुर्भुजा यक्षा मकरवाहना है और उसके दक्षिण करों में अक्षमाला एवं खड्ग (या अभयमुद्रा) और वाम में दण्ड एवं कटकमुद्रा उल्लिखित हैं। अज्ञातनाम श्वेताम्बर ग्रन्थ में वरदमुद्रा एवं पद्म धारण करनेवाली यक्षी द्विभुजा और उसका वाहन हंस है। यक्ष यक्षी लक्षण में उत्तर भारतीय दिगंबर परम्परा के अनुरूप मकरवाहना यक्षी चतुर्भुजा है और उसके करों में खड्ग, दण्ड, फलक एवं अक्षसूत्र दिये गये हैं।[1]

मूर्ति-परम्परा :- यक्षी की दो स्वतन्त्र मूर्तियाँ मिली हैं। ये मूर्तियाँ देवगढ़ (मन्दिर 12, 862 ई.) एवं बारभुजी गुफा के समूहों में उत्कीर्ण हैं। देवगढ़ के नमिनाथ के साथ सामान्य लक्षणों वाली द्विभुजा यक्षी उत्कीर्ण है। यक्षी के दाहिने हाथ में कलश है और बायां हाथ जानु पर स्थित है।[2] बारभुजी गुफा की मूर्ति में नमि की यक्षी त्रिमुखी, चतुर्भुजा एवं हंसवाहनी है जिसके करों में वरदमुद्रा, अक्षमाला, त्रिदण्डी एवं कलश प्रदर्शित हैं। यक्षी का निरूपण हिन्दू ब्रह्माणी से प्रभावित है।[3] लूणवसही की जिन-संयुक्त मूर्ति में यक्षी अम्बिका है।

(22) गोमेघ यक्ष

शास्त्रीय परम्परा :-गोमेघ जिन नेनिनाथ का यक्ष है। दोनों परम्पराओं में त्रिमुख एवं षड्भुज योमेध का वाहन नर (या पुष्प) बताया गया है।

श्वेताम्बर परम्परा-निर्वाणकलिका में नर पर आरूढ़ गोमेध के दक्षिण करों में मातुलिंग, परशु और चक्र तथा वाम में नकुल,[4] शूल और शक्ति का उल्लेख है।[5] अन्य ग्रन्थों में यही लक्षण वर्णित हैं।[6] आचारदिनकर में गोमेध के समीप ही अम्बिका (अम्बक) के अवस्थित होने का उल्लेख है।

---

1. रामचन्द्रन, टी. एन., पू. नि., पृ. 208
2. जि.इ.दे., पृ. 102, 106
3. मित्रा, देबला, पू.नि., पृ. 132
4. ज्ञातव्य है कि मूर्तियों में नेमिनाथ के यक्ष की एक भुजा में धन के थैले का नियमित प्रदर्शन हुआ है। धन का थैला नकुल के चर्म से निर्मित है।
5. गोमेधयक्षं त्रिमुखं श्यामवर्ण पुरुषवाहनं षटभुजं मातुलिंगपरशुचक्रान्वितदक्षिणपाणिं नकुलकशूलशक्तियुतवामपाणिं चेति। निर्वाणकलिका 18.22
6. त्रि.श.पु.च. 8.9.383-84; पद्मानन्दमहाकाव्यः परिशिष्ट–नेमिनाथ 55-56; मन्त्राधिराजकल्प 3.46; देवतामूर्तिप्रकरण 7.60; अचारदिनकर 34, पृ. 175

दिगम्बर परम्परा-प्रतिष्ठासारसंग्रह में गोमेध का वाहन पुष्प कहा गया है किन्तु आयुधों का अनुल्लेख है।[1] प्रतिष्ठासारोद्धार में वाहन नर है और हाथों के आयुध मुद्गर (द्रुघण), परशु, दण्ड, फल, वज्र एवं वरदमुद्रा हैं।[2] प्रतिष्ठातिलकम् में द्रुघण के स्थान पर धन के प्रदर्शन का निर्देश है[3] जिसके कारण ही मूर्तियों में नेमि के यक्ष की एक भुजा में धन का थैला प्रदर्शित हुआ।

गोमेध के नरवाहन एवं पुष्पयान को हिन्दू कुबेर का प्रभाव माना जा सकता है जिसका वाहन नर है और रथ पुष्प या पुष्पकम है। यही पुष्पक अन्ततः राम ने रावण से प्राप्त किया था।[4] वाहन के अतिरिक्त गोमेध पर हिन्दु कुबेर का अन्य कोई प्रभाव नहीं है।[5]

दक्षिण भारतीय परम्परा–दिगम्बर ग्रन्थ में त्रिमुख एवं षड्भुज सर्वाण्ह का वाहन लघु मन्दिर है। यक्ष के दक्षिण करों में शक्ति, पुष्प, अभयमुद्रा एवं वाम में दण्ड, कुठार, कटकमुद्रा वर्णित हैं। अज्ञातनाम श्वेताम्बर ग्रन्थ में त्रिमुख एवं षड्भुज यक्ष का वाहन नर है तथा उसके करों में कशा, मुद्गर, फल, परशु, वरदमुद्रा एवं दण्ड के प्रदर्शन का निर्देश है। यक्ष-यक्षी-लक्षण में गोमेध चतुर्भुज है और उसके हाथों में अभयमुद्रा, अंकुश, पाश एवं वरदमुद्रा वर्णित हैं। यक्ष का चिह्न पुष्प है और शीर्षभाग में धर्मचक्र का उल्लेख है। वाहन गज है।[6] दक्षिण भारत में प्रथम दो ग्रन्थों के विवरण सामान्यतः उत्तर भारतीय दिगंबर परम्परा में मेल खाते हैं, पर यक्ष-यक्षी-लक्षण का विवरण स्वतन्त्र है।[7]

---

1. नेमिनाथजिनेन्द्रस्य यक्षो गोमेधनामभाक्।
   श्यामवर्णस्त्रिवक्त्रश्च षट्हस्तः पुष्पवाहनः।। प्रतिष्ठासारसंग्रह 5.65
2. श्यामस्त्रिवक्त्रो द्रुधणं कुठारं दण्डं फलं वज्रवरौ च विभ्रत्।
   गोमेदयक्षः क्षितशंखलक्ष्मापूजां नृवाहोऽर्हतु पुष्पयानः।। प्रतिष्ठासारोद्धार 3.150
3. धनं कुठारं च विभ्रर्ति दण्डं सव्यैः फलैर्वज्रवरौ च योऽन्यैः। प्रतिष्ठातिलकम् 7.150
4. बनर्जी, ज. एन., पू.नि., पृ. 528-39; भट्टाचार्य, बी. सी., पू. नि., पृ. 115-16
5. केवल एक ग्रन्थ में धन के प्रदर्शन का उल्लेख है। इस विशेषता को भी हिन्दू कुबेर से सम्बन्धित किया जा सकता है।
6. रामचन्द्रम, टी. एन., पू. नि., पृ. 208-09
7. द्विभुज यक्ष की मूर्ति एलोरा की गुफा 32 में उत्कीर्ण है। इसमें गजारूढ़ यक्ष के हाथों में फल एवं धन का थैला प्रदर्शित हैं। यक्ष के मुकुट में एक छोटी जिन आकृति उत्कीर्ण है।

मूर्ति परम्परा– मूर्तियों में नेमिनाथ के साथ नर पर आरूढ़ त्रिमुख और षड्भुज पारम्परिक यक्ष कभी नहीं निरूपित हुआ। मूर्तियों में नेमि के साथ सदैव गजारूढ़ सर्वानुभूति (या कुबेर)[1] आमूर्तित है। सर्वानुभूति का श्वेतांबर स्थलों पर चतुर्भुज और दिगंबर स्थलों पर द्विभुज रूपों में निरूपण उपलब्ध होता है। दिगंबर स्थलों (देवगढ़, सहेठमहेठ, खजुराहो) की नेमिनाथ की मूर्तियों में कभी-कभी सर्वानुभूति एवं अम्बिका के स्थान पर सामान्य लक्षणों वाले यक्ष-यक्षी भी उत्कीर्णित हैं। सर्वानुभूति के हाथ में धन के थैले का प्रदर्शन सभी क्षेत्रों में लोकप्रिय था।[2] पर गजवाहन एवं करों में पाश और अंकुश के प्रदर्शन केवल श्वेताम्बर स्थलों पर ही दृष्टिगत होते हैं। सर्वानुभूति की सर्वाधिक स्वतन्त्र मूर्तियाँ गुजरात एवं राजस्थान के श्वेतांबर स्थलों से मिली हैं।

गुजरात-राजस्थान–इस क्षेत्र की श्वेतांबर परम्परा की जिन मूर्तियों के साथ (6ठी-12वीं शती ई.) तथा मन्दिरों के दहलीजों पर सर्वानुभूति की अनेक मूर्तियां उत्कीर्ण हैं। आठवीं-नवीं शती ई. में सर्वानुभूति की स्वतन्त्र मूर्तियों का भी उत्कीर्णन प्रारम्भ हुआ। अकोटा की नवीं शती ई. की मूर्तियों में द्विभुज यक्ष हाथों में फल एवं धन का थैला लिये है।[3] सातवीं-आठवीं शती ई. में सर्वानुभूति के साथ गजवाहन का चित्रण प्रारम्भ हुआ और दसवीं शती ई. में उसकी चतुर्भुज मूर्तियां हुई।[4] पर अकोटा और वसंतगढ़ की मूर्तियों में ग्यारहवीं शती ई. तक यक्ष का द्विभुज रूप में ही अंकन हुआ है।

ओसिया के महावीर मन्दिर (ल. 9वीं शती ई.) पर सर्वानुभूति की पाँच मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं।[5] इसमें द्विभुज यक्ष ललितमुद्रा में विराजमान

---

1. विविधतीर्थकल्प (पृ. 19) में अम्बिका के साथ गोमेध के स्थान पर कुबेर का उल्लेख है और उसका वाहन नर बताया गया है। मूर्तियों में नेमिनाथ के यक्ष-यक्षी के रूप में सदैव सर्वानुभूति (या कुबेर) एवं अम्बिका ही निरूपित हैं।
2. धन के थैले का प्रदर्शन ल. छठी शती ई. में ही प्रारम्भ हो गया। शाह, यू. पी., अकोटा ब्रोन्जेज, पृ. 31
3. आठवीं शती ई. की एक मूर्ति में यक्ष के करों में पद्म और प्याला भी प्रदर्शित हैं। शाह, यू. पी., पू. नि., चित्र 38ए।
4. दसवीं-ग्यारहवीं शती ई. की चतुर्भुज मूर्तियां घाणेराव, ओसिया एवं कुम्भारिया से प्राप्त हुई हैं।
5. ये मूर्तियां अर्धमण्डप के उत्तरी छज्जे, गूढ़मण्डप की दहलीज, भीतरी दीवार एवं पश्चिमी वरण्ड पर उत्कीर्ण हैं।

है और उसके बायें हाथ में धन का थैला है। तीन उदाहरणों में यक्ष के दाहिने हाथ में पात्र (या कपाल-मात्र)[1] है और शेष दो उदाहरणों में दाहिना हाथ जानु पर स्थित है। इनमें वाहन नहीं है। बांसी (राजस्थान) से प्राप्त और विक्टोरिया हाल संग्रहालय, उदयपुर में सुरक्षित एक द्विभुज मूर्ति (8वीं शती ई.) में गजारूढ़ यक्ष के हाथों में फल एवं धन का थैला हैं।[2] यक्ष के मुकुट में एक छोटी जिन मूर्ति बनी है। घाणेराव के महावीर मन्दिर की मूर्ति (10वीं शती ई.) में सर्वानुभूति चतुर्भुज हैं। घाणेराव मन्दिर के गूढ़मण्डप एवं गर्भगृह के दहलीजों पर भी चतुर्भुज सर्वानुभूति की चार मूर्तियाँ हैं। सभी उदाहरणों में ललितमुद्रा में विराजमान यक्ष की एक भुजा में धन का थैला प्रदर्शित है। इनमें वाहन नहीं उत्कीर्ण है। गूढ़मण्डप के दाहिने और बायें छोरों को दो मूर्तियों में यक्ष के हाथों में धन का थैला और शेष दो में अभयमुद्रा एवं फल हैं। बाये छोर की आकृति धन का थैला, गदा, पुस्तक एवं बीजपूरक से युक्त है। सर्वानुभूति के हाथों में गदा एवं पुस्तक का प्रदर्शन कुम्भारिया एवं आबू की मूर्तियों में भी प्राप्त होता है।

कुम्भारिया के शान्तिनाथ, महावीर एवं नेमिनाथ मन्दिरों (11वीं-12वीं शती ई.) की जिन मूर्तियों में तथा वितानों एवं भित्तियों पर चतुर्भुज सर्वानुभूति की कई मूर्तियां उत्कीर्ण हैं। अधिकांश उदाहरणों में गजारूढ़ यक्ष ललितमुद्रा में आसीन है, और उसके हाथों में अभयमुद्रा (या वरद या फल), अंकुश, पाश[3] एवं धन का थैला प्रदर्शित हैं।[4] कई चतुर्भुज मूर्तियों में दो ऊपरी हाथों में धन का थैला है, तथा निचले हाथ अभय-(या वरद-) मुद्रा और फल (या जलपात्र) से युक्त हैं।[5] शान्तिनाथ मन्दिर की देवकुलिका 11 की मूर्ति (1081 ई.) में गजारूढ़ यक्ष त्रिभुज है और उसके दोनों हाथों में धन का थैला स्थित है।

---

1. एक भुजा में कपाल-पात्र का प्रदर्शन दिगंबर स्थलों पर अधिक लोकप्रिय था।
2. अग्रवाल, आर. सी., सम इन्टरेस्टिंग स्कल्पचर्स ऑव यक्षज ऐण्ड कुबेर फ्राम राजस्थान, ईं. हि. क्वा., खं. 33, अं. 3, पृ. 204-205.
3. शान्तिनाथ मन्दिर की देवकुलिका 9 की जिन मूर्ति में पाश के स्थान पर पुस्तक प्रदर्शित है।
4. कभी-कभी धन के थैले के स्थान पर फल प्रदर्शित है।
5. इस वर्ग की बहुत थोड़ी मूर्तियां मिली हैं। कुछ मूर्तियां कुम्भारिया (नेमिनाथ मन्दिर) एवं विमलवसही (देवकुलिका 11) से मिली हैं।

ओसिया की देवकुलिकाओं[1] (11वीं शती ई.) की दहलीजों पर गजारूढ़ सर्वानुभूति की तीन मूर्तियां उत्कीर्ण हैं। इनमें चतुर्भुज यक्ष ललितमुद्रा में विराजमान है और उसके करों में धन का थैला, गदा, चक्राकार पद्म और फल प्रदर्शित हैं।[2] तारंगा के अजितनाथ मन्दिर (12वीं शती ई.) की भित्तियों पर चतुर्भुज सर्वानुभूति की तीन मूर्तियां हैं। गजवाहन से युक्त यक्ष तीनों उदाहरणों में त्रिभंग में खड़ा है, और वरदमुद्रा, अंकुश, पाश एवं फल से युक्त है। विमलवसही के रंगमण्डप के समीप के वितान पर षड्भुज सर्वानुभूति की एक मूर्ति (12वीं शती ई.) है। त्रिभंग में खड़े यक्ष का वाहन गज है और उसके दो करों में धन का थैला तथा शेष में वरदमुद्रा, अंकुश, पास एवं फल प्रदर्शित हैं।

उत्तरप्रदेश-मध्यप्रदेश–(क) स्वतंत्र मूर्तियां– इस क्षेत्र में सर्वानुभूति (या कुबेर) की स्वतन्त्र मूर्तियों का उत्कीर्णन दसवीं शती ई. में प्रारम्भ हुआ जिनमें वाहन का अंकन नहीं हुआ है। पर सर्वानुभूति के साथ कभी-कभी दो घट उत्कीर्ण हैं जो निधि के सूचक हैं। दसवीं शती ई. की एक द्विभुज मूर्ति मालादेवी मन्दिर (ग्यारसपुर) से मिली है, जिसमें ललितमुद्रा में आसीन यक्ष कपाल एवं धन के थैले से युक्त है। चरणों के समीप दो कलश भी उत्कीर्ण हैं।[3] देवगढ़ से यक्ष की दो मूर्तियां (10वीं-11वीं शती ई.) मिली हैं। एक में द्विभुज यक्ष ललितमुद्रा में विराजमान और फल एवं धन के थैले से युक्त है।[4] दूसरी मूर्ति में चतुर्भुज यक्ष त्रिभंग में खड़ा और हाथों में वरदमुद्रा, गदा, धन का थैला और जलपात्र धारण किये है। उसके वाम पार्श्व में एक कलश भी उत्कीर्ण है।

खजुराहो से चार मूर्तियां (10वीं-11वीं शती ई.) मिली हैं जिनमें चतुर्भुज यक्ष ललितमुद्रा में विराजमान हैं।[5] शान्तिनाथ मन्दिर एवं मन्दिर 32 का दो मूर्तियों में यक्ष के ऊपरी हाथों में पद्म और निचले

---

1. देवकुलिका 2, 3, 4
2. देवकुलिका 3 की मूर्ति में यक्ष की दक्षिण भुजाएं भग्न हैं।
3. कृष्ण देव, मालादेवी टेम्पल एट ग्यारसपुर, म.जै.वि.गो.जु.वा., बम्बई, 1968, पृ. 264
4. जि.इ.दे., चित्र 23, मूर्ति सं. 13
5. तिवारी, एम. एन. पी., खजुराहो के जैन शिल्प में कुबेर, जै. सि. भा., खं. 28, भाग 2 दिसम्बर 1975, पृ. 1-4

में फल और धन का थैला हैं। शेष दो मूर्तियां शान्तिनाथ मन्दिर के समीप के स्तम्भ पर उत्कीर्ण हैं। एक मूर्ति में तीन सुरक्षित हाथों में अभयमुद्रा, पद्म एवं धन का थैला हैं। दूसरी मूर्ति के दो करों में पद्म एवं शेष में अभयमुद्रा और फल प्रदर्शित हैं। चरणों के समीप दो घट भी उत्कीर्ण हैं। सभी उदाहरणों में यक्षों में सर्वानुभूति सर्वाधिक लोकप्रिय था। पार्श्वनाथ के धरणेन्द्र यक्ष के अतिरिक्त अन्य सभी जिनों के साथ यक्ष के रूप में या तो सर्वानुभूति आमूर्तित है, या फिर यक्ष के एक हाथ में सर्वानुभूति का विशिष्ट आयुध (धन का थैला) प्रदर्शित है।

(ख)जिन-संयुक्त मूर्तियां– स्वतंत्र मूर्तियों के साथ ही नेमिनाथ की मूर्तियों 8वीं-12वीं शती ई.) में भी सर्वानुभूति निरूपित है। राज्य संग्रहालय, लखनऊ की 5 मूर्तियों में यक्ष-यक्षी निरूपित हैं। तीन उदाहरणों[1] में द्विभुज यक्ष सर्वानुभूति है। यक्ष के करों में अभयमुद्रा (या वरद या फल) एवं धन का थैला हैं। ग्यारहवीं शती ई. की एक मूर्ति में यक्ष चतुर्भुज है और उसके करों में अभयमुद्रा, पद्म, पद्म एवं कलश हैं।

देवगढ़ की 19 नेमिनाथ की मूर्तियों (10वीं-12वीं शती ई.) में द्विभुज सर्वानुभूति एवं अम्बिका निरूपित हैं। प्रत्येक उदाहरण में सर्वानुभूति के बायें हाथ में धन का थैला प्रदर्शित है। पर दाहिने हाथ में फल, दण्ड, कपालपात्र एवं अभयमुद्रा में से एक प्रदर्शित है। मन्दिर 12 की चहारदीवारी की एक मूर्ति (11वीं शती ई.) में अम्बिका के समान ही सर्वानुभूति की भी एक भुजा में बालक प्रदर्शित है। सात उदाहरणों में नेमि के साथ सामान्य लक्षणों वाले द्विभुज यक्ष-यक्षी निरूपित हैं। ऐसे उदाहरणों में यक्ष के हाथों में अभयमुद्रा (या वरद या गदा) और फल प्रदर्शित हं। चार मूर्तियों (11वीं-12वीं शती ई.) में यक्ष-यक्षी चतुर्भुज है[2] और उनके हाथों में वरद (या अभय) मुद्रा, पद्म, पद्म एवं फल (या कलश) हैं। उपर्युक्त से स्पष्ट है कि देवगढ़ में पारम्परिक एवं सामान्य लक्षणों वाले यक्ष का निरूपण साथ-साथ लोकप्रिय था। ग्यारसपुर के मालादेवी मन्दिर एवं बजरामठ तथा खजुराहों की नेमिनाथ की मूर्तियों (10वीं-12वीं शती ई.) में द्विभुज यक्ष सर्वानुभूति

1. जे 792, 793, 936
2. ये मूर्तियां मन्दिर 11, 20 और 30 में है।

है। यक्ष के बायें हाथ में धन का थैला[1] और दाहिने में अभयमुद्रा (या फल) हैं।

विश्लेषण :– इस सम्पूर्ण अध्ययन से ज्ञात होता है कि उत्तर भारत में जैन यक्षों में सर्वानुभूति सर्वाधिक लोकप्रिय था। ल. छठी शती ई. में सर्वानुभूति की जिन-संयुक्त और आठवीं-नवीं शती ई. में स्वतन्त्र मूर्तियों का उत्कीर्णन प्रारम्भ हुआ।[2] सर्वाधिक स्वतंत्र मूर्तियां दसवीं और ग्यारहवीं शती ई. के मध्य उत्कीर्ण हुई। यक्ष के हाथ में धन के थैले का प्रदर्शन छठी शती ई. में ही प्रारम्भ हो गया। पर गजवाहन का चित्रण सातवीं-आठवीं शती ई. में प्रारम्भ हुआ। स्मरणीय है कि गजवाहन का अंकन केवल श्वेतांबर स्थलों पर ही हुआ है। दिगंबर स्थलों पर गज के स्थान पर निधियों के सूचक घंटों के उत्कीर्णन की परम्परा थी। दिगंबर स्थलों पर सर्वानुभूति का कोई एक रूप नियत नहीं हो सका।[3] श्वेताम्बर स्थलों पर गजारूढ़ यक्ष के करों में धन के थैले के अतिरिक्त पद्म, गदा एवं पुस्तक का भी अंकन प्राप्त होता है। घाणेराव एवं कुम्भारिया की कुछ श्वेतांबर मूर्तियों में भी सर्वानुभूति के साथ पद्म, गदा और पुस्तक प्रदर्शित हैं।

(क्रमशः)

1. खजुराहो की एक मूर्ति (मन्दिर 10) में यक्ष की भुजा में धन का थैला नहीं है।
2. श्वेताम्बर स्थलों पर दिगंबर स्थलों की तुलना में यक्ष की अधिक मूर्तियाँ उत्कीर्ण हुई।
3. दिगम्बर स्थलों पर केवल धन के थैले का प्रदर्शन ही नियमित था।

महात्मा गाँधी और अहिंसा की अवधारणा

श्रीमती कल्पना मुकीम

'महात्मा' मोहनदासजी के पीछे लगा एक विशेषण जो आमतौर पर आध्यात्मिक साधु सन्तों के लिए प्रयुक्त होता पाया जाता है। अहिंसात्मक जीवन शैली से घुल-मिल जाने से उन्होंने यह सम्बोधन प्राप्त किया। सौराष्ट्र के इस महात्मा ने अहिंसा को सर्वे सर्वा साबित कर उसके आधार पर राष्ट्र को स्वतंत्र किया और 'राष्ट्रपिता' कहलाये। जन-जन को पुत्रवत् स्नेह प्रदान करते रहे। जन-जन उन्हें 'बापू' पुकारने लगा। वजह उन्होंने अपनाया केवल और केवल 'अहिंसा धर्म'।

गाँधीजी और अहिंसा के समन्वय का प्रारम्भ कहाँ से और कैसे हुआ? प्रसंग वश थोड़ा सा अतीत की ओर मुड़ना होगा। 2 अक्टूबर 1869 में करमचंद जो वैष्णव धर्मी थे तथा पुतली बाई जो जैन धर्मी थी, के यहाँ पुत्र रत्न मोहनदास का जन्म हुआ।

उच्च शिक्षा प्राप्ति हेतु विलायत (इंग्लैण्ड) भेजने का प्रसंग उपस्थित हुआ। पुतली बाई (माता) ने एक जैन साधु बेचरदासजी के कहने से मोहनदासजी से तीन प्रतिज्ञायें करवा ली।

क) शराब नहीं पीऊंगा।
ख) मांस नहीं खाऊंगा।
ग) परस्त्री गमन नहीं करूंगा।

माता को दिये वचन प्रमाण निर्वाहन करते हुए बने महान। उन्होंने 'आत्मकथा' में यह स्वीकार किया कि इन तीन नियमों के बदौलत ही वे अहिंसक बने।

अहिंसा के विषय में महात्मा गाँधी के महत्वपूर्ण विचार इस प्रकार है-[1]

1. धर्म के निचोड़ का दूसरा नाम ही अहिंसा है।
2. अहिंसा का अर्थ है–ईश्वर पर भरोसा।

---

1. मोक्ष मार्ग में बीस कदम, पृष्ठ - 46.

3. जैसे हिंसा की तालीम में मारना सीखना जरूरी होता है, वैसे ही अहिंसा की तालीम में मरना, सीखना पड़ता है।
4. मेरी अहिंसा का मतलब है–सबसे प्रेम करना।
5. उस जीवन को नष्ट करने का हमें कोई अधिकार नहीं है, जिसे हम बना नहीं सकते।

उपरोक्त विचार उनके अहिंसा के विषय में ही केवल नहीं थे बल्कि साक्षात् जीवन में उसे उतारने में वे सफल बने थे। पहले करनी फिर कथनी के कारण जो भी व्यक्ति उनके संसर्ग में आता उनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाता और उन्हीं का होकर रह जाता। इसके प्रत्यक्ष प्रमाण है–1917 ई. में चम्पारण्य से गाँधी जी ने प्रथम सत्याग्रह आंदोलन शुरु किया। 6 अप्रैल 1930 ई. में डांडी यात्री की व नमक का कानून तोड़कर सविनय अवज्ञा आंदोलन चलाया।

1942 ई. में 'भारत छोड़ो' आन्दोलन तथा 'करो या मरो' का नारा दिया। विदेशी वस्त्रों की होली, स्वदेशी वस्त्र का व्यवहार, असहयोग, साक्षरता, सामाजिक जन जागरुकता, सर्वधर्म समभाव, जातिवाद व अस्पृश्यता का विरोध आदि।

एक बार महात्माजी से पूछा गया[1] 'महात्माजी! आप जैसे दुबले पतले व्यक्ति में ऐसी शक्ति कहाँ से आ गयी कि आप जिधर पाँव रखते है, उधर लाखों पाँव चल पड़ते है, आपकी बात सुनकर करोड़ों आदमी जेल जाने को तैयार हो जाते है, आप जिधर देखते है करोड़ों आँखें उधर ही देखने लग जाती है।'

वे बोले 'यह मेरी शक्ति नहीं है, धर्म की शक्ति है। मैंने सत्य और अहिंसा को अपने जीवन में प्रतिष्ठित किया है। सत्य को ही मैं परमेश्वर मानता हूँ।' फिर पूछा गया कि वह सत्य कहाँ मिल सकता है? तो गाँधीजी ने उत्तर दिया कही नहीं। व्यक्ति अपने हृदय के भीतर ही सत्य पा सकता है।

अर्थात् इस प्रकार की घटनाएं इंगित करती है कि आत्म स्वभाव में रहना ही सर्वश्रेष्ठ धर्म हैं तथा इस सर्वश्रेष्ठ धर्म का नामकरण है अहिंसा। गौर परस्त है कि इस अपेक्षा से यह परमो धर्म की श्रेणी में

---

1. मोक्ष मार्ग में बीस कदम, पृष्ठ - 114

आ गया। अर्थात् शेष विभिन्न व्रतों यथा सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य आदि को धर्म में गृहीत तो किया जा सकता है, जिसमें कोई सत्य को तो कोई ब्रह्मचर्य को तो कोई और किसी को प्रधानता अथवा मुख्यतया मानता है लेकिन वरिष्ठ अहिंसा को ही। अहिंसा को वह परमोधर्म ही मानता है जिसके ऊपर और कोई धर्म नहीं। यह बात समझ में आने पर यह सरलता से गले उतरती है कि 'अवसेसा तस्मरक्खट्ठा'[1] जो कि विभिन्न आचार्यों का कथन है जिसका अर्थ है शेष सभी व्रत (धर्म) अहिंसा की सुरक्षा के लिए हैं।

महात्मा गाँधीजी के अनुसार अहिंसा के माने पूर्ण निर्दोषता है। पूर्ण अहिंसा का अर्थ है–प्राणी मात्र के प्रति दुर्भाव का पूर्ण अभाव। म. जी अहिंसा की व्याख्या[2] करते हैं 'अहिंसा का अर्थ है–सूक्ष्म जन्तुओं से लेकर मनुष्य तक सभी जीवों के प्रति समभाव।'

यह अहिंसा मानवेत्तर प्राणियों यहाँ तक कि विषधर कीड़ों और हिंसक जानवरों का भी आलिंगन करती है।

महात्मा गाँधी जी यहाँ निरपेक्ष अहिंसा के व्याख्या के पश्चात् यह कहते है कि ऐसी निरपेक्ष अहिंसा को व्यवहार में नहीं अपनाया जा सकता। डॉ. ईश्वर चन्द्र शर्मा के अनुसार[3] गाँधीजी ने एक स्थान पर कहा है– "अहिंसा एक अत्यन्त भयानक शब्द है। मनुष्य बाह्यात्मक हिंसा के बिना जीवित ही नहीं रह सकता। वह खाते-पीते उठते-बैठते समय अनायास ही किसी प्रकार की हिंसा करता रहता है। उसी व्यक्ति को अहिंसा का पुजारी मानना चाहिए, जो इस प्रकार की हिंसा से निवृत होने का सतत प्रयास करता है जिसका मन दया से पूर्ण है और जो सूक्ष्म जीवों की हिंसा की भी इच्छा नहीं करता। ऐसे मनुष्य का निमन्त्रण तथा उसके हृदय की कोमलता सदैव प्रवृद्ध होते चले जायेंगे, किन्तु इसमें कोई संदेह नहीं कि कोई भी जीवित प्राणी बाह्यात्मक हिंसा से पूर्णतया मुक्त नहीं है।"

आधार की इस पृष्ठ भूमि पर महात्मा गाँधी ने निरपेक्ष अहिंसा को असंभव मानकर सापेक्ष अहिंसा को ही सामान्य मनुष्य के लिए आदर्श माना है।

---

1. मोक्ष मार्ग में बीस कदम
2. मोक्ष मार्ग में बीस कदम
3. पंचम पत्र लॉडनूं पेज - 55

निरपेक्ष अहिंसा का पालन उनके अनुसार जन साधारण की परिधि से बाहर हैं इसीलिए तलवार की धार की भांति इस कठिन मार्ग पर चलना सरल हो ही नहीं सकता। महात्मा गाँधी ने भाषणों में, लेखों में, नाना विभिन्न स्थानों पर अहिंसात्मक मार्ग के बारे में भगवान महावीर के 'पणया वीरा महावीहि' का ही समर्थन किया है। अर्थात् अहिंसा के प्रति समर्पित वीर पुरुष ही हो सकते हैं। अहिंसा वीरों का मार्ग है, कायरों का नहीं।

महात्मा गाँधी ने भी अहिंसा पक्ष के संदर्भ में अनेक बार कहा है 'यह मार्ग निर्बल और भीरु व्यक्ति के लिए नहीं, अपितु वीर और साहसी व्यक्तियों के लिए निर्धारित किया गया है।[1]

महात्मा गाँधी की जीवन शैली व विचारों पर गौर करें तो यह निर्विवादतः समक्ष आता है कि उन्होंने जैन धर्म में वर्णित श्रमणों के महाव्रत रूपी अहिंसा को मान्य तो किया है लेकिन व्यवहार में श्रमणोंपासकों की अणुव्रत रूपी अहिंसा को प्रधानता दी है।

महात्मा गाँधी जी ने भारतीय दृष्टि कोण को स्पष्ट करते हुए लिखा था 'इस देह में जीवन धारण करने में कुछ न कुछ हिंसा होती है, अतः श्रेष्ठ धर्म की परिभाषा में हिंसा न करना रूप निषेधात्मक अहिंसा की व्याख्या की गई है। आत्म तुला के मर्म को समझे बिना हिंसावृत्ति नहीं छूटती इसीलिए अहिंसा में मैत्री रूप विधि और अमैत्री त्याग रूप निषेध दोनों समाये हुए हैं। सब जीवों को समान समझो और किसी को हानि मत पहुँचाओं इन शब्दों में अहिंसा के दोनों रूप विद्यमान है। विधायक अहिंसा का रूप है सब में अपने आप को देखों। निषेधात्मक अहिंसा का रूप है–किसी को हानि मत पहुँचाओं।'

'आत्मवत् सर्व भूतेषु' का प्रतिपादन, गाँधी जी आत्मतुला के मर्म को समझने की बात कहते है, तब करते हैं।

सर्वविदित है कि इसी अणुव्रत रूपी अहिंसा को जीवन में उतारकर अपने अन्य साथियों को भी इसकी प्रेरणा दी। उनके उत्तम चरित्र का निर्माण किया। इस प्रकार की अहिंसा को राजनीति में अपनाकर भारत की स्वतंत्रता संग्राम में अपने स्वर्णिम योगदान को अंकित किया। सत्याग्रह भी महात्मा गाँधी की अहिंसावादी विचारधारा ही है। अहिंसा का मार्ग जिनके रोम रोम में समा गया ऐसे उत्तम चरित्र की गठन वाले

1. तित्थयर जनवरी 1985 पेज-266

सत्याग्रह में शामिल थे। अहिंसा को अपनाने के पश्चात् ही आत्मा की निज शक्ति, स्वभाव को अपनाकर ही वे सामना करने को तत्पर हुए थे। सत्याग्रहियों की मानसिकता दुःख, कठिनाईयाँ, शस्त्रों आदि का सामना अशस्त्र रूप अहिंसा से करने के लिए तत्पर थी। उससे मिली सफलता ने साबित कर दिखाया कि आत्मा की वैभाविकता पर आत्मा की स्वाभाविकता अथवा स्वभाव दशा का बल भारी पड़ता है। भौतिक अथवा वैज्ञानिक शक्ति पर विजयी बनने की कुव्वत केवल नैतिकता और आध्यात्मिकता में ही है इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है यहाँ निश्चित रूप से भारत सदा-सदा के लिए उनकी इस देन के लिए ऋणी रहेगा।

इस संदर्भ में 1954 में निर्मित श्याम-श्वेत चित्रपर 'जागृति' में अभि भट्टाचार्य ने महात्मा गाँधी की भूमिका का निर्वहन किया था, आज भी स्मरणीय है। इसमें गीतकार प्रदीप द्वारा रचित तथा लता मंगेशकर द्वारा गाया गया एक गीत आज तक भी लोगों की जुबान पर सहज रूप में गुनगुनाया जाता है।

"दे दी हमें आजादी बिना खड़ग बिना ढाल।
साबरमती के सन्त तूने कर दिया कमाल।।"

इन पंक्तियों को याद करते हुए सुलोचना श्री जी महाराज साहिबा कहती है– "महात्मा गाँधीजी के प्रति कितने सुन्दर सम्मान जनक भाव प्रदर्शित किये है कवि ने और यह गीत भी राष्ट्रीय सम्मान को प्राप्त है।[1]"

महात्मा गाँधी जी का व्यक्तित्व निःसन्देह हिमालय की तरह विराट था। उनके समस्त व्यक्तित्व का आकलन किया जाय तो उनके जीवन का प्रत्येक पहलू अणुव्रती रूपी अहिंसा व्रत की मिसाल ही हैं। अहिंसा की उनकी अवधारणा जिसे वे समय-समय के रूप में देखते थे उसी के अनुसार वे जीना, रहना तथा काम करना चाहते थे। ऐसा कर पाना पूर्णतः आवश्यकता का प्रमाण जीवन में कितना है इसी पर निर्भर होता है। सच्चाई यही है कि प्रत्येक मानव अपनी आवश्यकताओं को और कम-और-कम करना सीखें।

'गाँधी आज भी प्रासंगिक है' इस शीर्षक के तहत आर० आर० दिवाकर[2] गाँधी जी के विचार, आवश्यकता पर व्यक्त करते हैं– 'सबसे

1. पूज्य सुलोचना श्री जी महाराज साहिबा की व्यक्तिगत डायरी से।
2. युवा दृष्टि अक्टूबर 2007 वर्ष 35 अंक 10, पृष्ठ - 38

सम्पन्न व्यक्ति वही है जो अपने आवश्यकताओं के लिए किसी भी बाहरी चीज पर निर्भर न हो।'

नीति-नियमों का इस प्रकार पालन जब स्वेच्छा से किया जाता है तब व्यक्तिगत स्तर पर वह व्यक्ति नैतिकता को अपनाकर समय का सही मूल्यांकन कर, सही उपयोग कर विश्व शांति स्थापित करने में योगदान देता हैं। गाँधी जी का पहनावा, खान-पान, विचारधारा, कार्य, प्रत्येक क्रिया-कलाप इसका सबूत है कि वे ऐसे ही थे।

इस अपेक्षा से गाँधी जी का जीवन मन और काया की पवित्रता से सरोबार था। इसका दृश्य उनकी प्रार्थना सभाओं में अन्तर आत्मा से किये गये प्रवचन से दृष्टिगोचर होता था। गाँधीजी ने यम-नियमों को, पंतजलि के आठ चरणों में से प्रथम दो चरणों को अपने जीवन में उतारा था। दैनंदिन प्रार्थना में व्यक्तिगत व सार्वजनिक रूप में वे अणुव्रतों का व इन्द्रिय निग्रह का दृढ़ संकल्प किया करते थे। इन सभी नियमों अथवा व्रतों को पुष्ट करने हेतु ध्यान चिंतन का महत्व जान इसे भी उन्होंने जीवन में स्थान दिया था।

अनुशासनबद्ध ऐसे जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि यह थी कि वे हमेशा अपने अन्दर की आवाज को सुना करते थे। उन्होंने अपने से पूर्व महात्माओं तथा ग्रंथों (जैसे भगवान महावीर, बुद्ध, पतंजली, गीता, महाभारत आदि) में उल्लेखित धर्म दर्शन से कभी भी इन्कार नहीं किया था। गाँधी दर्शन रूप अलग से कोई भी दर्शन अध्ययन का विषय नहीं है यह इस बात की गवाही है।

गौर परस्त यहाँ यह है कि फिर भी हम 'गाँधीवाद' शब्द प्रयोग यत्र-तत्र-सर्वत्र होता हुआ देखते है, तब फिर यह वया है? इस प्रश्न के तह में जाने से उनके सूक्ष्म से सूक्ष्म क्रिया-कलाप, मानव-कल्याण, यथार्थता, अहिंसकता, स्वराज को सहजता से दृष्ट करने वाले थे, यह विदित होता है। उनके दैनंदिन गतिविधियों-क्रिया कलापों में से आध्यात्मिकता का शंखनाद गुंजायमान होता रहा। अन्य शब्दों में नैतिकता कहे या आध्यात्मिकता कहे या गाँधीजी के दृष्टिकोण से केवल मानव कल्याण हेतु कहे, सर्वोच्च नैतिक नियमों की प्राधान्यतः से जीवन की प्रत्येक गतिविधि की जाय यही गाँधीवाद है। जिसे उन्होंने अपने जीवन में उतारने में कोई कसर नहीं छोड़ रखी थी। उनके इसी गुण

से प्रभावित दार्शनिक सी. ई. एम. जोड़ उन्हें मानवता की अन्तरआत्मा[1] कहते थे।

गाँधीजी की आध्यात्मिकता के संदर्भ में अंग्रेज इतिहासकार टॉयनबी[1] कहते है–'हालांकि गाँधीजी जनता की विभिन्न समस्याओं को हल करते हुए हमेशा काम में आकंठ डूबे रहते थे, वे अपने आध्यात्मिक प्रयत्नों में जरा भी ढ़ील नहीं देते थे।' एक अन्य प्रसंग में टॉयनबी कहते है कि मानव की सबसे बदनाम गतिविधि, राजनीति में भीतर तक घुस जाने के बावजूद गाँधी निष्कलंक उसमें से बाहर निकल आने में समर्थ हुए। क्योंकि उन्होंने आध्यात्मिकता का कवच पहन रखा था।

आध्यात्मिक कवच के संदर्भ में उन्हें इससे प्राप्त आत्मबल निर्भयता आदि निहित है। बापू प्रार्थना सभा में सर्व धर्म समभाव से ओत-प्रोत रहते थे। उनके आश्रम की भजनावली में सभी धर्मों के भजन कीर्तन पाठ-उपदेशों आदि को समाहित किया गया था। बापू के किसी भी समस्या के समाधान रूप अस्त्र थे सत्य और अहिंसा। 'आमरण भूख-हड़ताल इसके साथ ही नैतिक और आध्यात्मिक चेतना का उपयोग सर्वोपरि था। उनकी आध्यात्मिकता रूप ब्रह्मास्त्र तो भगवन्नाम ही था। इसके पीछे भी एक आधार पूर्ण वजह थी।'

'बापू का अमोघ मंत्र– राम नाम'[2] शीर्षक के अन्तर्गत डॉ. शुभंकर बनर्जी महात्मा गाँधी के बाल्यावस्था की एक घटना को एक व्यक्तव्य में उन्हीं के द्वारा स्वीकारी गई बात दोहराते हैं– बचपन में बापू डरपोक थे। अक्सर भूत-प्रेत से डरते थे। महात्मा गाँधी की धाय माँ का नाम रम्भा था। धाय माँ ने उन्हें समझाया जब भी डर लगे तब राम नाम जपा करो। राम का नाम ही तुम्हारी सभी विपत्तियों से रक्षा करेगा। दुःख-कष्ट, भय-डर संभी कुछ बस एक बार सच्चे दिल से 'राम-नाम' लेते ही दूर भाग जायेंगे।

बापू ने इसे नियम बनाया तथा निर्भय निडर बने। अपने सच्चे और खरे आचरण की आन्तरिक शक्ति से वे पूरे राष्ट्र को समझा पाये कि मृत्यु जीवन में केवल एक बार आती है, जिसका समय निर्धारित है। मृत्यु नियति है, चरम और परम सत्य है। स्वयं निर्भय बनकर देश को भी भय मुक्त बनाकर देश की आजादी के लिए प्राण न्योंछावर करने

---

1. युवा दृष्टि अक्टूबर 2007 वर्ष 35 अंक 10, पृष्ठ - 36
2. अणुव्रत 1-15 अक्टूबर 2011, वर्ष 56, अंक 23 संपादक महेन्द्र जैन, पृष्ठ - 24

हेतु तत्पर बनाया। अहिंसा की ताकत से शक्तिशाली ब्रिटिश साम्राज्य के छक्के छुड़ा दिये और देश को आजाद किया।

बापू की नैतिकता के पक्ष को उजागर करता हुआ एक किस्सा कुछ इस प्रकार है–बापू किशोरावस्था में बुरी संगति में पड़े थे। किसी से कर्ज लिया। साहूकार द्वारा तंग किये जाने पर घर से एक तौला स्वर्ण चुराकर कर्ज अदा किया। पश्चात् पश्चाताप की आग में झुलस कर पत्र द्वारा पिताजी से क्षमा याचना करते हुए भविष्य में वैसा न करने का संकल्प किया। पिता ने उनका अपराध क्षमा किया।

क्या बापू के नैतिक होने का ही केवल एक किस्सा है यह? नहीं। उन्होंने कोई अपराध किया है केवल क्या इस अपराध के बोझ तले बापू परेशान थे? नहीं! स्वर्ण उनके द्वारा चुराये जाने की भनक तक घर में किसी को नहीं थी। वे भी मौन रहकर बात ढ़की रहने दे सकते थे। किसी को पता न चलता।

नैतिकता का यह स्तर अहिंसा का परोक्ष रूप से जनक था। स्वकी अपेक्षा चोरी दुष्कर्म छिपाने के लिए झूठ बोलना दूसरा अपराध था। पर-दृष्टि से गलत काम कर पिता माता को अंधेरे में रखना उनके प्रति तथा पिता-माता मन ही मन किसने लिया होगा ऐसा सोचते उसके प्रति भी बापू की ओर से की गई यह हिंसा ही होती। भाव रूप से अहिंसक बने रहने की जागरुकता की यह मिसाल थी। बापू ने जीवन में पुनःश्च कोई भी दुष्कृत्य करने से स्वयं को सुरक्षित किया।

बापू आत्मानुशासन पर अधिक बल दिया करते थे। व्यक्ति सुधार से ही क्रमशः समाज, राष्ट्र व विश्व सुधार हो जायेगा। यह उनकी धारणा थी। अर्थात् कल्पना में विश्व व्यापकता, कृति में वैयक्तिकता।

एक प्रसंग है–एक बार एक महिला बच्चे के अधिक गुड़ खाने की आदत को छुड़ाने हेतु बापू के पास ले आयी। बापू ने एक सप्ताह बाद आने को कहा। सप्ताह के बाद आने पर अधिक गुड़ खाने से पेट में कीड़े, दाँत सड़ना आदि नुकसानों से आगाह कर छोड़ने को कहा। महिला ने बापू से कहा कि यह बात वे सप्ताह पूर्व भी कह सकते थे। बापू ने कहा कि तब वे स्वयं गुड़ खाते थे अतःकिसी को छोड़ने नहीं कह सकते थे। अब उन्होंने छोड़ दिया तो उनका उपदेश कारगर साबित होगा अर्थात् व्यक्ति निर्माण की प्रक्रिया ही समाज-राष्ट्र को जागरूक कर विश्व बन्धुत्व, विश्व-मैत्री,

विश्व-शांति, विश्व-हित आदि में योगदान दे पायेगी। पहले स्वयं प्रारम्भ करें, परिवर्तन लाये तब आप विश्व की भी तस्वीर बदल सकते हैं।

किसी भी नीति-नियम-सिद्धान्त को स्वयं जीने बाद ही उसे करने के लिए गाँधी जी कहते थे। यही वजह थी अकेले बापू ने राष्ट्र-गठन कर भारत को आजादी दिलाने में सफलता प्राप्त की।

राजनीतिक, आध्यात्मिक, मानवीय, सामाजिक, वैधानिक, वैयक्तिक, वैश्विकता की अपेक्षा गाँधी जी के जीवन दर्शन की झाकियाँ उनके स्वराज के स्वप्न की याद दिलाती है, जिसका बहुत बड़ा पैमाना आर्थिक क्षेत्र से संलग्न-जुड़ा हुआ था।

गाँधीजी का चरखा। इसे आप हम सूक्ष्म-सूक्ष्मतर-सूक्ष्मतम नजरिये-पहलू से देखे तो उनके भावों का, अपेक्षाओं का इतना ही नहीं वरन् करनी का चित्र कुछ इस प्रकार उभर कर सामने आता है।

चरखे से सूत कातना। सर्वप्रथम यह प्रत्येक व्यक्ति को कार्य देता है। उससे बने वस्त्र पहनना। स्वदेशी उत्पादन का उपयोग देश को सम्पन्न व आत्म निर्भर बनाता हैं। आत्म निर्भरता यानि बेराजगारी का उच्चाटन-निर्मूलन जो सूत कातने व वस्त्र बनाने के कार्य से बड़े प्रमाण में आती हैं। देश सम्पन्न कैसे बनता है? देश की मुद्रा विदेशी वस्तुओं के उपयोग में अपने देश से बाहर जाती है। वह धन पुनश्च देश में अन्य कार्य में उपयोगी नहीं रह जाता। परिणाम रुपये की कीमत में गिरावट। ऐसा होना राजकोषीय घाटा, आर्थिक वृद्धि दर में कमी क्योंकि धन विदेशों में जा रहा है। परिणाम स्वरूप गरीबी, भ्रष्टाचार, काला धन, वैश्विक मंदी, पूँजी बाजार में गिरावट आदि। (गृह उद्योगों का घटते जाना तथा औद्योगिककरण में यान्त्रिकीकरण क़ा वर्चस्व। दुष्परिणाम सत्ता का केन्द्रीकरण इतना ही नहीं वरन् यांत्रिकी उर्जा से प्रदूषण, विषाक्त, वायुमंडल, जो ओजोन आवरण को दिन-प्रतिदिन हानि पहुँचाता है। गाँधीजी को समय के पूर्व ही भविष्य का आभास हुआ भविष्य में होने वाले मानवता के हर प्रकार के शोषण को दूर करने के लिए गाँधी ने प्रेम, परोपकार समभाव का संदेश दिया।

बापू ने सर्वप्रथम इस ओर आकर्षित किया कि मनुष्य को किसी भी आवश्यकता पूर्ति हेतु उचित साधनों का प्रयोग अर्थात् नैतिकता के दायरे में साधन प्रयोग करना चाहिए। उत्पादन और वितरण प्रणाली में साधन-शुद्धि की प्रधानता हो। वे विकेन्द्रीकरण और ट्रस्टीशिप के

समर्थक थे। यह प्रयास साधन शुद्धि का ही प्रयोग था। सभी प्रजा की समुचित हिस्सेदारी अर्थात् सहस्वामीत्व, समानता, न्यायोचित साधन आदि द्वारा आर्थिक संदर्भ व सम्पूर्ण देशवासियों के मध्य अहिंसात्मक तालमेल की प्रमुखता बनी रहे, ताकि हिंसात्मकता, असमानता व शोषण जैसी प्रवृत्तियाँ पनप न सकें।

आध्यात्मिकता की अपेक्षा अहिंसात्मक भावना की तहत सर्वोदय की भावना जागृत करने में वे तत्पर हुए, जो आज की स्थिति में और भी अधिक प्रासंगिक है।

बापू आजाद भारत को हिंसक प्रवृत्ति से परे, ऊँच-नीचता से परे सर्व जन हिताय की नीति अपनाते हुए स्वराज के रूप में देखना चाहते थे। आजादी के पश्चात् एक दिन डॉ. सुशीला नय्यर[1] ने बापू से प्रश्न किया कि अब तो आप राजनीति से हटकर समाज सुधारकं की भूमिका का निर्वाह करेंगे? बाबू ने कहा वे नैतिकता के आधार पर राजनीति को शुद्ध करने का कार्य प्रारम्भ करना चाहते हैं। धर्म के शुद्ध रूप से राजनीति संबद्ध है। स्वराज का साकार रूप इसी में विलीन है।

स्वराज कैसा हो? 20-4-1921 सूरत की सभा में भाषण देते हुए बापू ने कहा हम ऐसा स्वराज चाहते है जिससे सभी व्यक्तियों को भंगियों तक को समान अधिकार प्राप्त हो।

मानव के प्रति मानवता की भावना से बापू का हृदय ओत-प्रोत था। मानव-मानव के मध्य रंग भेद, जातिभेद, अस्पृश्यता किसी-किसी भी प्रकार के हिंसात्मक प्रवृत्तियों, भावनाओं से परे मानवता के लिए वरियता थी। तत्कालीन हरिजन-सेवा के बापू के व्यवहार से सम्पूर्ण राष्ट्र परिचित है। मानव में अन्तरनिहित सहज गुणों अर्थात् आत्मा के मूल स्वभाव के तहत मैत्री-बन्धुत्व भाव रूपी विश्व व्यापी अहिंसा का साम्राज्य स्थापित करना चाहते थे। यही वजह है कि गाँधी जी के प्रजातन्त्र को स्वराज शब्द से सम्बोधित किया गया।

प्रजातंत्र क्या होता है? लोगों का लोगों के लिए, लोगों की ओर से बनाया गया तंत्र प्रजातंत्र वा लोकतंत्र के नाम से जाना जाता है। मतगणना के आधार पर एक प्रणाली के तहत जन प्रतिनिधि कार्य सम्पन्न करते हैं। गाँधीजी बहुमत प्राप्त तन्त्र प्रणाली के सख्त खिलाफ थे। वे

1. अणुव्रत 1-15 अक्टूबर, 2011 वर्ष 56 अंक 23 संपादक महेन्द्र जैन पृष्ठ 14

चाहते थे सेवा भाव व प्रेम की प्रधानता हो। इस प्रकार के राम राज्य अथवा स्वराज को वे अपनाना चाहते थे।

भारतीय संविधान में गाँधी जी का स्वप्न स्वतंत्रता के अधिकारों के अन्तर्गत मान्य किया गया। आज 66 वर्ष बीत चुके लेकिन उनके स्वराज की झलक कहीं दिखाई देती नहीं। गाँधी जी स्वराज के लिए एक मापदण्ड निर्धारित कर गये। इसके लिए चार गुण[1] उन्हें अपेक्षित थे-

1) पुलिस की जरूरत आत्म रक्षा के लिए कम से कम हो। पुलिस व जनता के बीच निश्छल प्रेम का माहोल हो।

2) जेल में कैदियों की संख्या कम से कम हो।

3) अस्पतालों में बीमारों की संख्या कम से कम हो।

4) कानूनी आदालतों की संख्या कम से कम हो।

स्वराज के लिए अपेक्षित गुणों को संक्षेप में हम यूं कह सकते है, यथा– प्रशासन व प्रजा के बीच अद्वैतभाव, कारागृह, अस्पताल व अदालतों की आवश्यकता का अति निमनस्तर।

गौर परस्त-मद्देनजर बिन्दु यह है कि इनके पृष्ठ-पार्श्व में बापू की मंशा क्या थी? बापू का आपसी भाईचारा का भाव, सामंजस्य परिवार व समाज की मजबूत आचार संहिता जिसमें गुनाह की मानसिकता को बल न मिले। "सादा जीवन, उच्चविचार, मानव जीवन का श्रृंगार" इस धारा के तहत सर्व श्रेष्ठ मानसिक आरोग्य प्राप्त हो। कुल मिलाकर हिंसात्मक प्रवृत्तियों का अभाव वाला रामराज्य स्थापित हो।

परोक्षतः अहिंसा के हर हालात में पक्षधर अर्थात् मन-विचारों से, वचन-उच्चार से, काया-आचार से स्वयं जीवन व्यतीत करने वाले व औरों को प्रेरणा देकर उन्हें स्वयं स्फूर्त अहिंसा की धारा में बहा ले जाने वाले बापू जीती-जागती अहिंसा की प्रतिमूर्ति थे।

बापू भगवान महावीर द्वारा स्थापित अहिंसा के प्रबल पक्षधर थे। अहिंसा का सबसे अधिक विवरण महावीर ने प्रस्तुत किया है ऐसी उनकी मान्यता थी। अगर किसी ने पूर्ण अहिंसा को आचरण में लाया हो या उसका प्रचार किया हो तो वो भगवान महावीर ही है–महात्मा गाँधी।[2]

---

1. अणुव्रत 1-15 अक्टूबर, 2011 वर्ष 56, अंक 23 पृष्ठ-15
2. अमी-वर्षा, पृष्ठा 33

अहिंसा का जिक्र करते हुए बापू यह स्वीकार करते थे कि सम्पूर्ण अहिंसा तो तन तक प्राप्त नहीं की जा सकती जब तक कि यह हाड़-मांस का तब है लेकिन हिंसा के उपयोग को धीरे धीरे कम किया जा सकता है। हिंसा का कोई भविष्य नहीं है।[1]

उपर्युक्त कथन आ. आर. दिवाकर ने "गाँधी आज भी प्रासंगिक है।" शीर्षक के तहत बापू का अहिंसा के प्रति दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हुए किया है।

विभिन्न स्थानों पर, विभिन्न अवसरों पर बापू या बापू की अहिंसा पर जब भी किसी ने कुछ कहा बापू ने यह स्पष्ट किया कि वे भगवान महावीर की अहिंसा के ही पक्षधर थे। बापू की जीवन शैली में व्याप्त अहिंसा भगवान महावीर की अहिंसा की ही प्रतिछाया थी।

मैं यह विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि अहिंसा के सिद्धान्त के कारण भगवान महावीर के नाम को भव्यता प्राप्त हुई है। अगर किसी ने पूर्ण अहिंसा को आचरण में लाया हो या उसका प्रचार किया हो तो यह भगवान महावीर ही है। महात्मा गाँधी।[2]

अहिंसा की पूर्ण स्थिति भगवान महावीर ने हासिल की और सर्वज्ञ बने यह जग विदित है। तब उन्होंने वो कैसे प्राप्त की? उत्तर है लक्ष्य की शुद्धि के साथ-साथ लक्ष्य प्राप्ति की मार्ग शुद्धि अर्थात दूसरे शब्दों में साध्य और साधन दोनों में पूर्ण शुद्धता होनी ही चाहिए।

बापू प्रत्येक क्षेत्र में नैतिक मूल्यों को अधिष्ठित करते हुए लक्ष्य प्राप्ति की ओर बढ़ने में यकीन रखते थे। साधन और साध्य की बापू की अवधारणा जीवन दर्शन के सम्बन्ध में अटूट है। साधन तथा साध्य एक दूसरे के बिना अकल्पनीय है।

साध्य हेतु साधन शुद्धि तथा साधन शुद्धि आधार पर ही साध्य प्राप्ति का लक्ष्य, परस्पर सम्बद्ध घटनाओं के प्रमाण बापू के जीवन में यत्र-तत्र-सर्वत्र बिखरे पड़े हैं। इसका प्रमाण उन्हें लक्ष्यकर बनाये गये चित्रपट। महात्मा गाँधी सदैव ही साधन की तादाद की अपेक्षा उसकी गुणवता शुद्धि पर बल देते रहे।

---

1. युवा दृष्टि जुलाई 2012 पृष्ठ 12 वर्ष 40 अंक 7.
2. जैन धर्म की रूपरेखा, लेख पू. आचार्य देव राज यशसूरीश्वरजी म. सा. सम्पादक-श्री विधुत यशविजयजी म. सा. पृष्ठ- 59

अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता। इस कहावत को गलत साबित कर दिखाया गाँधीजी ने। इसका साक्षी हमारा चित्रपट जगत भी है। चित्रपट जगत की एक विशेषता सदा से रही है कि कभी किसी समस्या से राष्ट्र पीड़ित हुआ हो, कभी किसी प्रभावशाली व्यक्तित्व ने कुछ साहसिक अथवा सामान्य सोच से ऊपर कर दिखाया है। उस पर चित्रपट जरूर बना है जैसे– दहेज के प्रलोभन में वधु हत्या, तो बन गया चित्रपट 'समाज को बदल डालो', बढ़ते अपराधों पर विजय पाना है तो कानून की अपेक्षा हृदय परिवर्तन पर बल, चित्रपट बना– 'दो आँखें बारह हाथ', राजनीतिक भ्रष्टाचार से देश का गिरता मानक-चित्रपट बना 'नायक', धार्मिक अंधश्रद्धा। पर प्रहार करता चित्रपट बना 'ओ माई गॉड' आदि।

इस कथन के पीछे आशय केवल इतना है महात्मा गाँधी जैसी महान् विभूति कैसे इससे अलिप्त रह सकती थी। उन पर भी एक नहीं अनेक चित्रपट बनाये गये। उनके महान चरित्र का प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि न केवल हिन्दुस्तान में बल्कि इंगलैण्ड में भी उन पर एक चित्रपट बनाया गया। इतना ही नहीं वरन् उनके विशाल विराट व्यक्तित्व से वे ऐसे प्रभावित हुए कि रिचर्ड अटेन बर्ग (Richard Atten barough) कि उनके द्वारा 1982 में बनाई 'GANDHI' फिल्म ने, उनपर बनी हिन्दुस्तान की फिल्मों को पीछे छोड़ 'ऑस्कर अवार्ड' हासिल किया। जॉन ब्रिले (John Briley) द्वारा लिखित इस कथानक में गाँधी की भूमिका निभाई बेन किंग्स्ले (Ben Kingsley) ने। जो उनके द्वारा आज तक निर्वाह की गई भूमिकाओं में सर्वोत्कृष्ट हैं।

इस चित्रपट में 'अहिंसा' 'भारत छोड़ो आन्दोलन' 'असहयोग आन्दोलन' 'जलियावाला बाग' आन्दोलन 'भारत विभाजन' इन सबके दौरान की उनके कारावास (जेल-यात्रा) की घटनाएँ आदि का अर्थात् भारत के स्वातंत्र्य–युद्ध से भारत की स्वतंत्रता तक का किया गया सर्वोत्तम चित्रांकन हैं।

बापू की अहिंसा ने उन्हें झकझोर दिया था। हिंसा पर अहिंसा की ऐसी विजय की कि हिंसा करने वाला हिंसक ही अहिंसा के पुजारी का कायल बन गया। इससे विभक्त अथवा पुख्ता प्रमाण और क्या हो सकता है कि अहिंसा की अप्रतीम आत्मशक्ति अर्थात् आत्मस्वभाव, वैभाविक दशा पर निश्चित रूप से हावी होने में सक्षम है। साथ ही इस चित्रपट का बनना स्वयं इस बात को साबित करता है कि अंग्रेज भारत से चले जाने के पश्चात् और तो और गाँधीजी के इस दुनिया से चले जाने के पश्चात् भी उन्हें भुला नहीं पाये। क्यों? अहिंसा की प्रतिमूर्ति– बापू।

हिन्दुस्तान में सर्वप्रथम 1954 में बनी जागृति जिसके बारे में पूर्व में जानकारी दी गई है। 1963 में बनी Nine Hours to Rama जिसमें 30-01-1948 को दिल्ली में नाथुराम गोडसे ने जो बापू से प्रभावित था, फिर भी उन्हें मारने का निर्णय क्यों लिया, इसका चित्रांकन किया गया है।

1968 में डाक्युमेंटरी 'Life of Gandhi इसमें बापू के जन्म से मृत्यु तक (1968-1948) के तथ्यों पर प्रकाश डाला गया हैं। 'सत्य की खोज' पर बापू का दृष्टिकोण जिसकी प्रमुख विशेषता है। सत्य रूपी अहिंसा पर उनकी घनिष्ठता का विशेष अंकन इसमें हुआ है।

1996 में बनी 'Making of Mahatma' अर्थात् गाँधी से महात्मा तक इसे प्रमुख रूप से प्रकाशित करते हुए यह बताया गया है कि दक्षिण अफ्रीका से बैरिस्टर बनकर आया गाँधी भारत में महात्मा कैसे बना?

2000 में बनी 'हे राम' जिसमें बापू के दैहिक हलन चलन (Body language) तथा गुजराती उच्चारण का इतना उत्तम चित्रांकन कि चित्रपट ऑस्कर अवार्ड के लिए नामांकित हुआ जरूर लेकिन मिला नहीं। 'हे राम' बापू के मुँह से निकले अंतिम शब्द जो दिल्ली में राजघाट में बनी उनकी समाधि पर आज भी अंकित है।

2006 में 'लगे रहो मुन्नाभाई' नामक फिल्म में संजय दत्त ने गाँधी जी का तत्त्ववेत्ता (फिलासॉफर) के रूप में भूमिका का निर्वाहन किया। इसमें कह प्रार्थना करते हुए यह पंक्तियाँ दोहराते। यथा–

रघुपति राघव राजा राम, पतित पावन सीता राम।
ईश्वर अल्लाह तेरो नाम, सबको सन्मति दे भगवान।।

गाँधीजी की अपनी प्रार्थना सभाओं में, विभिन्न भजन कीर्तन करने का उल्लेख पूर्व में आया है। इसी भजन पर यहाँ क्यों जोर दिया गया।

वर्तमान में चल रहे हिन्दु-मुस्लिम दंगे फसाद (राम मंदिर बाबरी मस्जिद काण्ड) अर्थात् जात-पात को मुद्दा बनाकर हिंसा का वातावरण फैलाने वाले जागो। सन्मति अर्थात् आत्म स्वभाव रूप अहिंसा जो प्रत्येक प्राणी के अन्दर है उसे अनावृत कर विश्व मैत्री के भाव को सदा अपनाये रखो। आदि वर्तमान के संदर्भ में जो शुद्ध अर्थ अभिप्रेत है उसके अनुसार बढ़ते चलो। जिस विषम परिस्थिति में बापू ने अहिंसात्मक मार्ग को अपना कर विजय प्राप्त कर दिखाई उसे 6-7 दशक भी पूर्ण नहीं हुए इसे भूलो मत। बापू ने स्वतंत्रता-संग्राम के दौरान कहा था, रक्त

की एक बूँद गिराकर भी स्वातंत्र्य प्राप्त होता है तो वह मंहगा हैं। सामने वाला शस्त्र उठाये तो भी हमें नहीं उठाना हैं।

डॉ. वन्दना कुण्डलिया ने[1] महात्मा गाँधी के बारे में 'साधन-साध्य की अवधारणा' शीर्षक के तहत कहा है गाँधी जी के अनुसार 'साधन और साध्य एक दूसरे से चोली दामन की तरह सम्बद्ध है और एक की अपवित्रता दूसरे को अपवित्र कर देती है अतः यदि साध्य उत्तम है तो उसकी प्राप्ति के साधन भी उतने ही उत्तम होने चाहिए। पवित्र-साध्य' के लिए यदि उतना ही 'पवित्र साधन' न मिले तो इस साध्य को भी छोड़ देना चाहिए। अतः हमारे साधन जितने शुद्ध होगें, ठीक उसी अनुपात में साध्य की ओर हमारी प्रगति होगी। गाँधी जी के अनुसार यह तरीका लम्बा, शायद बहुत लम्बा, मालूम पड़ सकता है, लेकिन यह वास्तव में सबसे छोटा है।

ऐसा तरीका अहिंसा का ही है। इतने विश्वास पूर्वक-यकीन के साथ हम ऐसा कैसे कर सकते हैं? इसके प्रमाण में 'श्री पृथ्वीराज जैन' ने 'जैन धर्म का मूल आधार'[2] इस शीर्षक के तहत कहा है– गाँधी जी कहते है-जो बात में कहना चाहता हूँ और जो करके मरना चाहता हूँ वह यह है कि सत्य और अहिंसा को संगठित करूँ। अगर वह सब क्षेत्रों के लिए उपयुक्त नहीं है तो वह झूठ है। मैं कहता हूँ कि जीवन की जितनी विभूतियाँ है सबमें अहिंसा का उपयोग है।

अहिंसा के सिद्धान्त का बापू सर्वक्षेत्र में व्यवहार करते थे व सभी को करना चाहिए ऐसा उनका मानना था। श्री पृथ्वीराज जैन[3] पुनः यहाँ यह उल्लेख करते है–

'किसी भी नियम या सिद्धान्त की सार्थकता तभी मान्य हो सकती है जब हम उसे अपने जीवन में मूर्त्त रूप दे सके। जिस अहिंसा द्वारा आत्मा में विद्यमान राग, द्वेष, कषाय, स्वार्थ, आदि को जलाया जा सकता है, वह समाज और राष्ट्र तथा विश्व में व्याप्त विष को दूर करने में भी समर्थ है।'

श्री पृथ्वीराज जैन[4] 'जैन अहिंसा से गाँधीवाद की समानता' बताते हुए कहते हैं– "जैन धर्म की तरह महात्मा गाँधी भी यह विश्वास रखते है कि

1. युवा दृष्टि जुलाई 2012 वर्ष 40, अंक 7 पृष्ठ 12
2. तित्थयर, जुलाई 2002, वर्ष 26, अंक 4, पृष्ठ 174
3. तित्थयर, जुलाई 2002, वर्ष 26, अंक 4, पृष्ठ 174
4. तित्थयर, अगस्त 2002, वर्ष - 26, अंक : 5, पृष्ठ - 212

वास्तविक हिंसा–मनुष्य की भावना में समाई हुई है, उसके स्थूल कार्यों में नहीं। उनका कहना है, अहिंसा आचरण का स्थूल नियम मात्र नहीं है, बल्कि मन की वृत्ति हैं। जिस वृत्ति में कहीं द्वेष की गन्ध तक न हो वह अहिंसा है। अहिंसा का भाव, दिखाई देने वाले परिणाम में ही नहीं है, बल्कि अन्तःकरण की राग-द्वेष रहित स्थिति में है। (गाँधी विचार-दोहन पृष्ठ 4) 'आत्मकथा' (भा. 2 पृष्ठ 212) में वह लिखते है अहिंसा एक व्यापक वस्तु है।"

महात्मा गाँधी और अहिंसा की अवधारणा की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि वैयक्तिक रूप से समस्या, संकट, अन्याय का सामना अंहिसा से करने के ढेरों उदाहरण इतिहास में देखने को मिलते है लेकिन सामूहिक रूप से ऐसा सामना अहिंसक रूप से इतने व्यापक प्रमाण में करने का यह अप्रतिम, अनूठा उदाहरण है, इसमें कोई दो राय नहीं। यही गाँधी से महात्मा गाँधी बनने की अर्थात्, अहिंसा से प्रतिष्ठित होने की कथा है।

(समाप्त)

सोने के कंगन

श्री केवल मुनि

पूर्णचन्द्र और पुष्पसुन्दरी : पाँचवाँ भव :

दिन व्यतीत हुआ। रात्रि आई। आकाश में पूर्णिमा का पूर्णचन्द्र उदित हुआ। पुष्पसुन्दरी के चन्द्रमुख से उसकी प्रतिस्पर्धा लग गई। भूमि पर चन्द्रमुखी पुष्पसुन्दरी लताओं के मध्य लुका-छिपी खेल रही थी और आकाश में चन्द्र भी बदलियों के बीच लुकाछिपी कर रहा था। कभी प्रगट हो जाता तो कभी छिप जाता। एक बड़ी बदली के पीछे चन्द्र छिप गया और उद्यान में, लता मंडप में पुष्पसुन्दरी पुष्प-लृन्द के पीछे। भूमि पर अन्धकार छा गया। सखियों ने प्रेरणा दी तो पुष्पसुन्दरी ने वीणा उठाई और बजाना प्रारम्भ किया। सखियों ने स्वर अलापा-संगीत लहरी हवा में गूंज उठी।

कुमार पूर्णचन्द्र भी उद्यान के दूसरे भाग में अपने मित्रों के साथ क्रीड़ा में निमग्न था। रात्रि की नीरवता में जो उसने वीणा की मधुर झंकार और गायन का कर्णप्रिय स्वर सुना तो आकर्षित होकर उसी दिशा में चल दिया। लता मंडप में आकर देखा–एक सुन्दरी अपनी सखियों के साथ संगीत लहरी प्रसारित कर रही है।

पर-पुरुष के अचानक प्रवेश करने से सुन्दरियों का ध्यान भंग हुआ। संगीत-लहरी रुक गई। पुष्पसुन्दरी ने दृष्टि उठाई और कुमार को देखा तो ऐसा लगा, मानो अनुपम रुपवान, सुन्दर, सजीला कामदेव पुरुष ही सामने खड़ा है। पूर्णचन्द्र की नजरें भी उससे जा टकराई। दोनों एकटक देख रहे थे। कुमार के हृदय में अनेक जिज्ञासायें उठ रही थीं–यह सुन्दरी कौन है? रति है, देवकन्या है, अथवा गन्धर्वकन्या या चन्द्र ही चन्द्रमुखी का रूप धारण कर भूमि पर अवतरित हो गया है। पूर्व जन्मों के प्रेम संस्कारों के कारण दोनों ही एक दूसरे के प्रति आकर्षित हो गये। उन्हें रोमांच हो गया। दीन-दुनियों से बेखबर एक दूसरे में खो गये। नेत्रों की राह से हृदय में समा गये। सखियां दोनों की यह दशा देखकर परस्पर इशारे कर रही थी–परस्पर काना-फूसी कर रही थी--पर दोनों प्रेमियों को इसकी क्या खबर?

सखियों ने कुमार का स्वागत करते हुए कहा—

—आइये और अपने योग्य आसन पर विराजिये।

दोनों का ध्यान भंग हुआ। नजरें नीची गिर गई। मानों चोरी पकड़ी गयी हो। कुमार ने धीमे स्वर में सलज्ज कहा—

—आप लोग अपना संगीत चालू रखिये। मैं तो कर्ण-प्रिय ध्वनि को सुनकर यहाँ चला आया।

—इसीलिए तो हम आपसे अनुरोध कर रही है कि बैठिये और संगीत का आनन्द लीजिए।

—आप लोग आरम्भ तो करें।

सखियों को भान हुआ। उन्होंने पुष्पसुन्दरी से वीणा-बजाने का आग्रह किया। किन्तु उसकी अंगुलियाँ वीणा पर न चलीं। वह शरमिंदा होकर नीची दृष्टि किये बैठी ही रही। हाँ कनखियों से बार-बार कुमार को देख अवश्य लेती, प्रेमी हृदय की यही गति होती है—उसी से छिपना चाहता है और उसी को देखना।

सखियों ने जब देखा कि पुष्पसुन्दरी पसीने से तर और रोमांचित हो गई है तो उन्होंने कुमार से कहा—

—आप भी तो गुणी युवक है। संगीत विद्या पुरुषोचित बहत्तर कलाओं में प्रधान कला है। आप ही वीणा वादन करके हमारी सखी का मनोरंजन कीजिए। देखिए आपके आगमन से कैसी स्वेद-सिक्त और रोमांचित होकर दृष्टि भूमि पर गड़ाये बैठी है हमारी सहेली।

कुमार ने वीणा हाथ में ली और मधुर स्वर में बजाने लगा। इतना तन्मय होकर उसने वीणा वादन किया कि वन के पुष्प भी झूम उठे। सखियाँ रस विभोर और पुष्पसुन्दरी मुग्ध!

रंग में भंग किया पुष्पसुन्दरी की एक दासी ने। उसने अचानक ही आकर कहा—

—माता तुम्हें तुरन्त बुला रही है। अभी चलो।

संगीत रुक गया। माता की आज्ञा सुनकर पुष्पसुन्दरी भारी पांवों और भरे हृदय से चल दी। उसके कदम तो आगे पड़ रहे थे और मन पीछे ही रह गया। बार-बार मुड़-मुड़कर पीछे की ओर देखती जाती।

जब तक पुष्पसुन्दरी जाती हुई दिखाई देती रही कुमार उसे निर्निमेष दृष्टि से देखते रहे। उनका शरीर तो उद्यान में बैठा रहा और मन पुष्पसुन्दरी के साथ ही चला गया था।

राजकुमार पूर्णचन्द्र भी उठकर भारी दिल लिए राजमहल को चल दिये।

बातूनी सखियाँ चुप न रह सकी। उन्होंने जया से कहा–आज उद्यान में बड़ा मजा आया।

जया ने उत्सुकतापूर्वक पूछा–क्यों क्या हुआ?

पुष्पसुन्दरी बरजते हुए बोली–क्या व्यर्थ की बातें बना रही हो तुम सब, चुप नहीं रहा जाता?

माता जया की उत्सुकता और बढ़ गई। उसने कहा– पुष्पा! तू सखियों का मुँह बन्द क्यों कर रही है? उसने सखियों को सम्बोधित किया–हाँ बताओ, क्या हुआ उद्यान में।

–हुआ यह कि पुष्पा वीणा बजा रही थी। मधुर झंकार से आकर्षित होकर कुमार पूर्णचन्द्र वहाँ आ गये। उनके आते ही पुष्पा ने वीणा रख दी। वह मुख नीचा किये बैठी रही। कुमार का आग्रह भी न माना। तब कुमार ने वीणा बजाई। वह मुग्ध हो गयी।

पुष्पा ने बीच में ही बात काट दी–बहुत बाते बना रही हो। व्यर्थ की बातें करने में न जाने क्या आनन्द मिलता हैं?

सखियाँ चुप हो गई और पुष्पसुन्दरी ने अपना सुन्दर मुख नीचे झुका लिया, मानो चाँद धरती की ओर झुक गया हो।

रात्रि को नींद में पुष्पसुन्दरी पूर्णचन्द्र-पूर्णचन्द्र बड़बड़ाती रही। माता ने समझ लिया कि पुत्री कुमार से प्रेम करने लगी है।

सामन्त ने अपनी पुत्री का विवाह कुमार से करने की प्रार्थना राज सिंहसेन सी की। कुमार की इच्छा जानकर उन्होंने भी स्वीकृति दे दीं।

शुभ लग्न में कुमार पूर्णचन्द्र और पुष्पसुन्दरी प्रणय-बन्धन में बंध गये। चन्द्र-चकोरी का मिलन हो गया।

नव दम्पति प्रेम में मग्न हो गये और उनकी गहरी प्रीति देखकर माता-पिता को अतिशय आनन्द हुआ।

विशाला नगरी के बाहर पुष्पशाल नाम का बड़ा उद्यान था। एक बार सुरसुन्दर आचार्य वहाँ पधारे। वनपाल ने आचार्यश्री के आगमन की सूचना राजा सिंहसेन को दी। महाराज परिवार सहित आचार्यश्री के दर्शन-वन्दन निमित्त उद्यान में पहुँचे। पूज्यश्री ने राजा की विनती पर देशना दी–

भव्यो! संसार में चारों ओर दुःख और कष्ट ही दिखाई देते हैं। पशु और मनुष्य गति के कष्ट तो प्रत्यक्ष ही हैं। (क्रमशः)

तित्थयर वर्ष ३८
अप्रैल २०१४ से मार्च २०१५

निबन्ध

क्र. सं.	लेख	लेखक	पृ. सं.
१.	संस्कृत जैन श्रीकृष्ण-साहित्य एक अवलोकन	डॉ. अभिजीत भट्टाचार्य	५
२.	यक्ष-यक्षी प्रतिमाविज्ञान	डॉ. मारुति नंदन प्रसाद तिवारी	१०५
		१४१, १६६ २१३, २४९, २८५, ४२९,	
		३८१, ४१५, ४२९,४६५	
३.	अत्तिमब्बे	डॉ. हंपा नागराजय्य	१५१, १८३
		२२३, २५९	
४.	प्रागैतिहासिक व ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में अहिंसा की अवधारणा	कल्पना मुकीम	२८७
५.	बारा गाँव की जैन प्रतिमाएँ	अजीत प्रताम सिंह	४३५
६.	पर्यावरण क्षेत्र में अहिंसा की अवधारणा	कल्पना मुकीम	४४१, ४०३, ४४१
७.	जैन शिक्षा पद्धति की अध्यापन विधियाँ	साध्वी राजरश्मिजी	३५७
८.	आर्थिक क्षेत्र में अहिंसा की अवधारणा	कल्पना मुकीम	३६६
९.	आयुर्वेद में जैन मुनियों का योगदान	जैन साध्वी राजरश्मिजी	३९३
१०.	महात्मा गाँधी और अहिंसा की अवधारणा	कल्पना मुकीम	४७५

कथानक :

१.	सोने के कंगन	श्री केवलमुनि	१२३, १५९,
		१९३, २३३, २६४, ३०८, ४५३,	
		३८३, ४१८, ४५३, ४९१	

Creators of Prestigious Interiors
Established 1970

Creativity is a Modern Religion

Nahar

Architects, Interiors, Consultants

5B, Indian Mirror Street, Kolkata-700 013
Phone : 2227-5240/45, Fax : 22276356
Email Id : info@nahardecor.com

Change yourself and change your world

Shree Jin Chandra Suriji Maharaj
Founder of **SATYA SADHNA**

SITAL GROUP OF COMPANIES

Deals in :-

- ☐ Financial Services.
- ☐ Construction of Commercial & Residential Buildings.

BIKASH SINGH CHHAJER
"Centre Point" 21, Hemanta Basu Sarani
2nd Floor, Room No.-226, Kolkata-700001
Phone: (033) 22429265/22109228
Fax: (91-33) 22429265. Mobile: 9831022577
email: sitalgroupofcompanies@yahoo.co.in